INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL
ISSN NO : 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 14 | ISSUE - 4 | MAY – 2024

कवि पुहकर कृत 'रसरतन' में अलंकारों के प्रयोग का अध्ययन

राजेन्द्र प्रसाद साकेत
शोधार्थी हिन्दी
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

डॉ. लता द्विवेदी
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष हिन्दी शासकीय विज्ञान महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

सारांश –

रसरतन एक महत्वपूर्ण काव्य संग्रह है जो कवि पुहकर द्वारा रचा गया है। इस संग्रह में अलंकारों का विस्तृत प्रयोग किया गया है, जो कविता को सुंदरता और अर्थगति के माध्यम से और भी रोचक बनाते हैं। अलंकार शब्दों, वाक्यों, या विचारों की सुंदरता को बढ़ाने के लिए किए गए विभिन्न शैलियों का संग्रह होता है। रसरतन में पुहकर ने अलंकारों का विविध प्रयोग किया है, जो उनकी कविताओं को आकर्षक और प्रभावशाली बनाता है। कुछ लोकप्रिय अलंकार जिनका प्रयोग रसरतन में किया गया है, शब्दांतर, अपभ्रंश, यमक, अनुप्रास, अनुजा, अनुप्रास, और उपमा। इन अलंकारों का प्रयोग कवि ने अपनी कविताओं में करके उन्हें रसरतन को और भी सुंदर बनाया है। पुहकर के रसरतन में अलंकारों का प्रयोग करके वह न केवल कविता की सुंदरता को बढ़ाते हैं, बल्कि पाठकों को भी अलंकारों के माध्यम से कविता के अर्थ को समझने में मदद मिलती है। इस तरह, रसरतन अलंकारों के प्रयोग का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है जो हमें कविता के विभिन्न पहलुओं को समझने में मदद करता है।

मुख्य शब्द – रसरतन, काव्य संग्रह, कवि पुहकर एवं अलंकार।

प्रस्तावना –

'रसरतन' नामक कविता कवि जगदीश पुहकर की एक प्रसिद्ध कविता है जो प्रेम और रसिकता के विषय में है। इस कविता में उन्होंने विविध अलंकारों का प्रयोग करके कविता को गहराई और रंगीनता प्रदान की है। अलंकार कविता के रूप, रंग, और ध्वनि को अधिक चित्रित और उजागर करते हैं। हम विभिन्न अलंकारों के प्रयोग की गहराई से जानकारी प्राप्त करते हैं, जैसे कि उपमा, रूपक, अनुप्रास, अलंकृतान्त, और अद्वितीय अलंकार। यह अलंकार कविता को भाषा के माध्यम से और भी समृद्ध बनाते हैं, जिससे पाठक को उसकी भावनाओं को समझने में मदद मिलती है। साथ ही, अलंकारों का प्रयोग कवि की शैली को भी प्रभावित करता है। पुहकर की शैली काव्यमय, सुवाद्र, और संवेदनशील है, जिसमें अलंकारों का प्रयोग एक नई ऊर्जा और गहराई प्रदान करता है। इसके माध्यम से, हम पाठक को कविता में उपस्थित अलंकारों के महत्व को समझाते हैं और उनके विभिन्न विशेषताओं का उल्लेख करते हैं। इसके साथ ही, हम कवि की रचनात्मकता, शैली, और विचारधारा को भी समझने का प्रयास करते हैं।

रसरतन कविता में पुहकर ने प्रेम और रसिकता की अनगिनती दुनियाओं को बयां किया है। उन्होंने विभिन्न भावनाओं और अनुभूतियों को कविता के माध्यम से साकार किया है, जो पाठकों को एक गहरा और सुंदर प्रेम के साथ जुड़े अनुभव का अनुभव कराता है। यह अलंकार कविता को भाषा के माध्यम से और भी समृद्ध बनाते हैं, जिससे पाठक को उसकी भावनाओं को समझने में मदद मिलती है। इसके अलावा, कवि की भाषा और रचना उनकी शैली को विशेष बनाती है और पाठकों को एक साहित्यिक अनुभव प्रदान करती है। रसरतन कविता का प्रसिद्धता का कारण यह है कि यह प्रेम और रसिकता के अद्वितीय और विशाल जगत को उसकी असीम गहराई में प्रस्तुत करती है। इसका पाठकों पर गहरा प्रभाव होता है और वे इस कविता के माध्यम से एक नया संवाद स्थापित करते हैं, जिसमें प्रेम और रसिकता के सौंदर्य का आनंद लेते हैं।

विश्लेषण –

भाषा के सौन्दर्य को द्विगुणित करने में अलंकार विधान का नियोजन आवश्यक होता है। कवि पुहकर कृत 'रसरतन' में अलंकारों का प्रयोग बहुलात्मक रूप में हुआ है। कवि पुहकर को सूफ़ी प्रेमाख्यानक काव्यों की भाँति अनलंकृत भाषा का प्रतिपादन शायद स्वीकार्य नहीं था इसीलिए उन्होने अपने काव्य की भाषा को सुंदर बनाने के लिए तथा भावों को बोधगम्य बनाने के लिए अलंकार–विधान की योजना करनी पड़ी है।

'रसरतन' में अर्थालंकार तथा शब्दालंकार दोनों प्रकार के अलंकारों का प्रयोग कवि ने प्रचुर मात्रा में किया है।

उनके ग्रन्थ रसरतन में उत्प्रेक्षा, उपमा, रूपक, एवं रसलंकार, अतिशयोक्ति, मानवीयकरण, अनुप्रास, तथा अप्रस्तुत विधान का महत्वपूर्ण स्थान है।

अर्थालंकारों में उत्प्रेक्षा अलंकार के विधान में कवि का मन बहुत रमा है। कवि ने अपने संपूर्ण काव्य विशेषकर नख–शिख वर्णन में इस अलंकार का प्रयोग सर्वाधिक किया है–

''वंदन सौ माँग भरि मोतिनि सँवारी सरि
मेरे मन आई कछु उकति सुभाति है।
पावस उमड़ घन घोर मानौ कारी घटा।
ता मधि विराजै वरावगनि की पाँति है।।''[1]

यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार के विधान द्वारा कवि ने नायिका की मोतियों से सँवारी हुई माँग को पावस ऋतु की घनघोर काली घटा के मध्य बगुलों की भाँति के सदृश बताकर उसकी माँग का सुंदर वर्णन किया है। उत्प्रेक्षा अलंकार के कतिपय अन्य उदाहरण इस प्रकार हैं–

''अधर सुरंग भरे मुष वीरा। विहँयत वदनुदिपहि जनु हीरा।।''[2]
''वहै रूप वैसी छवि देष्यौ। मानहुँमूरति मेन विषेष्यौ।।
अरु वचन चितु लीनौ। मानौ श्रवन सुधा पुट दीनौ।।''[3]

कवि पुहकर ने रसरतन में उपमालंकार की मनोहारी रूप प्रस्तुत किया है–

''चरन कमल वर अरून वरन तल
सीसी सम रंगु डोलै आभा एड़ी लाल की।''[4]

यहाँ नायिका की ''लाल एड़ी' के लिए 'शीशी में डोलते हुए रंग का उपमान के रूप मे अत्यंत सटीक प्रयोग हुआ है जो उसकी एंड़ी की सुन्दरता को सहज बिंबित कर देने में समर्थ है। एक अन्य उदाहरण द्रष्टव्य है–

''कंठ सिरी जाल उर कंठ कंठ माल तैसी
मनि बाल लाल (भाल?) विमल विसेषियै।
कहै कवि पुहकर छूटी लर मोतिनि की
पोतिहू कौ छरा अपछरा सम लेषियै।।''[5]

पुहकर कवि का रूपकालंकार अवलोकनीय है :–

"वेद विवित्र जो आइयौ, तिहिकर दीनौ चित्र।
सो कुमार लोचन कमल, परष्यौ मोहन मित्र।।"[6]

प्रस्तुत उदाहरण में नयनों में कमल के अभेद आरोपन द्वारा नयनों की सुदंरता की अभिव्यंजना की गई है।

संदेहालंकार – के परिपेक्ष्य में एक मनोमय दृष्टान्त प्रस्तुत है–

"मति गज उभय उरोजनि की आड़ किधौं
सोभा की अविध सिँवा सब सुषदैनी है।
तीनि लोक पैये के विधना तीनि रेष षांची
साँची छवि पुहुकर मनुहरि लेनी है।।
किधौं मनमथ जू जनेउ दियौ जोबन कौं
प्रगटे त्रिगुन किधैं तरल त्रिबेनी हैं।
चारू चतुराई तरूनाई रूप अधिकाई।
त्रिवली सरस किधौं तरल त्रिबेनी है।।"[7]

यहाँ नायिका की त्रिवली के वर्णन में कवि ने संदेहालंकार की झड़ी सी लगा दी है। कवि अनुसार रंभा की त्रिवली त्रिवेनी के समान शांतिदायक स्वरूप है।

अतिशयोक्ति – अलंकार की योजना द्रष्टव्य है–

अतिशयोक्ति अलंकार विधान में भी कवि पुहकर की अभिरूचि स्पष्ट परिलक्षित होती है। इस अलंकार का प्रयोग नख–शिख वर्णन में विशेष रूप से किया गया है। इसके अतिरिक्त नायक सूरसेन के आकर्षक वीणा वादन से उन्मत्त चंपावती नागरिकों की अवस्था का वर्णन अतिशयोक्ति अलंकार की योजना द्वारा ही संभव हो पाया है।

"देषि सोभा रही रीझि प्यारी प्रिया। मग्ग भूलै चलै चित्त हारै त्रिया।
संग छाँडै मृगी जेमि भूली फिरैं। हार टूटै हियै भूमि मोती गिरे।।
छूटि वैनी गई वार बंधै नहीं। नेह लाग्यौ नयौ मैन अग्गी दही।।
प्रान दीनै जहाँ बीन बानी सुनी। पानु कीनै मनौ माधुरी वारूनी।।
जीय जंपै नहीं विस्वुरी वत्तियाँ। नैन आँसू चलै दाह दैं छत्तियाँ।।
रित्तु पावस्स ज्यौं नीरनद्दी बहै। प्रीति पूरी हियै कावि कित्ती कहै।।"[8]

वारूणी के प्रेम नशे से उन्मत्त नगर की यह अवस्था अतिशयोक्ति को छूती है। जिसे पीकर बातें बिसर जाती हैं, बोल निकल पाते हैं। नैन में आँसू और छाती में दाह भर जाता है। पावस की नदी की तरह राग में बहती ये नागरिकाएँ अपनी अवस्था कहैं तो किससे और कैसे?

कवि द्वारा यह योजना साभिप्राय है क्योंकि कवि का उद्देश्य वीणा के अलौकिक माधुर्य को दिखाना और माधुर्य के विश्वव्यापी प्रभाव को व्यक्त करना था। इसीलिए कवि ने इस अलंकार का विधान किया है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

मानवीकरण की दृष्टि से कवि का विन्यास देखें :–

कवि पुहकर के काव्य में मानवीकरण के स्थल बहुत कम है। कवि ने यदा–कदा इस अलंकार का विधान किया है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"भादौ मेघ सिंह घन गाजै। मनु मतंग देषत हरि भाजै।।
निसु दिनु मेघ अड़ित जलधारा। जल थल भरै सरित सरषारा।।"[9]

उपरोक्त उद्धरण में भादौं मास के मेघगर्जन पर सिंह की दहाड़ का आरोप करके जो चित्र प्रस्तुत किया है वह उसकी भयंकरता का ही द्योतक है।

अनुप्रास – का काव्यात्मविधान अवलोकनीय है –

शब्दालंकारों में कवि ने अनुप्रास अलंकार का विधान प्रचुर मात्रा में किया है –

''कोकिल कल अरू कोक कल, कला कंठ कलराउ।।
कूका कुहुकुनि कुहुक है, क्रम–क्रम कहसि सुभाउ।।''[10]

प्रस्तुत उदाहरण में क्रमशः 'क', और 'ह' वर्णों की आवृति न केवल भाषा के बाह्य रूप को ही सौंदर्य प्रदान करने में सहायक सिद्ध हुई है अपितु कवि पुहकर की कोक कला और कोकिक कला दोनों कलाओं में गति का प्रमाण देने में समर्थ हैं।

कवि पुहकर ने अलंकार–विधान के इस विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि कवि सब प्रकार के अलंकारों के प्रयोग में सिद्धहस्त कवि थे। कवि का अलंकार–विधान काव्य में रसोत्कर्ष एवं स्तुत्य सौंदर्य प्रदान करने में समर्थ रही है। 'रसरतन' की प्रभविष्णुता एवं प्रेषणीयता में कवि पुहकर का अलंकार–विधान सर्वत्र सहायक सिद्ध हुआ है।

अप्रस्तुत विधान – की दृष्टि से 'पुहकर' का काव्य नियोजन।

वर्ण्य–विषय की स्पष्टतः अनुभूति के लिए अभिव्यक्ति में तीव्रता लाने के लिए तथा प्रतिप्राद्य का सम्यक् बोध कराने के लिए काव्य में मूर्त एवं अमूर्त अप्रस्तुतों का विधान किया जाता है। आलंकारिक एवं अप्रस्तुत वैधानिक सौंदर्य यद्यपि एक प्रकार से अन्योन्याश्रित हैं–आलंकारिका सौंदर्य में अप्रस्तुत वैधानिक सौंदर्य अंतर्भाषित रहता है और अप्रस्तुत वैधानिक में आलंकारिक–तथापि दोनों की पृथक् सत्ता एवं स्वरूप का भी निषेध नहीं किया जा सकता। काव्य में अप्रस्तुत विधान का अपना विशिष्ट स्थान है। कवि का अभिव्यक्तिगत सौंदर्य बहुत कुछ अप्रस्तुत वैधानिक सौंदर्य पर निर्भर करता है। आलोचक प्रवर डॉ. नगेंद्र का यह कथन अप्रस्तुत विधान के महत्व का ही अभिव्यंजक है–''अभिव्यक्ति को स्मरणीय एवं सबल बनाने का सबसे सहज तथा अपयोगी साधन है, अप्रस्तुत विधान अर्थात् प्रस्तुत की श्रीवृद्धि के लिए अप्रस्तुत का उपयोग। यह अप्रस्तुत विधान प्रधानतः साम्य पर आधृत रहता है, और यह साम्य प्रमुख्तया तीन प्रकार का होता है रूप–साम्य (सादृश्य), धर्म साम्य (साधर्म्य) और प्रभाव–साम्य।''[11]

अप्रस्तुत विधान के चार रूप हो सकते हैं–

- मूर्त प्रस्तुत, मूर्त अप्रस्तुत।
- अमूर्त प्रस्तुत, मूर्त अप्रस्तुत।
- मूर्त प्रस्तुत, अमूर्त अप्रस्तुत।
- अमूर्त प्रस्तुत, अमूर्त अप्रस्तुत।

कवि पुहकर ने 'रसरतन' में उपयुक्त अप्रस्तुत विधान के चारों रूपों की निबंधना की है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

मूर्त प्रस्तुत, मूर्त अप्रस्तुत –

''अंबुज नैनि विसालनि अंजन दीजिये।
चंचल षंजन मीन पलट्टै कीजिये।।''[12]

यहाँ 'नयन' प्रस्तुत के लिए 'अबुंज' अप्रस्तुत है। प्रस्तुत और अप्रस्तुत दोनों ही मूर्त हैं। इस प्रकार की अप्रस्तुत योजना रूपादि का अनुभव कराने में विशेष रूप से सहायक सिद्ध होती हैं।

अमूर्त प्रस्तुत, मूर्त अप्रस्तुत –

''विरहानल मैं जड़ हवै जुवती
निसि पौढ़ि पलंक्क पलक्क लगायौ।''[13]

उपरोक्त उद्धकरण में प्रस्तुत 'विरह' अमूर्त है। और उसके लिए अप्रस्तुत रूप में 'अनल' का भाव व्यंजक विधान किया गया है।

मूर्त प्रस्तुत, अमूर्त अप्रस्तुत –

''विरही कौ वल विरहिनी कौ विलासु हासु
दुषित के जीव ही तें छीनता विसेषिये।
जोग की जुगति जप जोतिक के ग्यान जोई
पाइये जू नैन तब तेरी कटि देषिये।।''[14]

यहाँ 'कटि' प्रस्तुत है और 'विरही कौ वल' और 'विरहिनी कौ विलासु हासु' अप्रस्तुत भाव की तीव्रता को बढ़ाने के लिए मूर्त के लिए अमूर्त की अभिव्यंजना की गई है।

अमूर्त प्रस्तुत, अमूर्त अप्रस्तुत

इस प्रकार का अप्रस्तुत विधान प्रायः सर्वसाध्य एवं सुलभ नहीं होता। इसलिए अप्रस्तुत विधान के इस रूप की योजना कविगण बहुत कम करते हैं। 'रसरतन' में भी इस प्रकार के उदाहरण ढूँढ़ने पर ही मिलते हैं–

''विरह व्याधि मैं विरहनी, व्याकुल विरह विहाल।
पंच बांन विहवल भई, पुहुकर अबला बाल।।''[15]

यहाँ 'विरह' प्रस्तुत और 'व्याधि' अप्रस्तुत दोनों ही अमूर्त है। किंतु इस प्रकार के स्थल कवि पुहकर के काव्य में बहुत कम हैं।

निष्कर्ष :–

निष्कर्षतः कवि पुहकर का अप्रस्तुत विधान यद्यपि रूढ़ एवं परंपरागत है यथापि उनका प्रयोगगत औचित्य एवं विषयानुकूल वैविध्य उनकी समर्थ कल्पना–शक्ति एवं उत्कृष्ट काव्य–प्रतिभा का ही परिचायक है। पुहकर ने अपने काव्यों में अलंकारों का प्रयोग उस विषय या सन्देश को सामर्थ्यपूर्ण बनाने के लिए किया है, जिसे वे व्यक्त करना चाहते थे। उन्होंने विभिन्न चित्रणों, उदाहरणों और आदि के माध्यम से अपनी कल्पना को शक्तिशाली ढंग से प्रस्तुत किया। पुहकर की काव्य–प्रतिभा उनके अलंकारों के प्रयोग में स्पष्ट रूप से प्रकट होती है। उनकी काव्यशैली में उच्चतम स्तर की कल्पना, भावनाओं की सामर्थ्यपूर्ण व्यक्ति, और शब्दों की सहजता और साहसिकता दिखाई देती है। इस प्रकार, पुहकर के काव्य में रूढ़ अलंकारों का प्रयोग उनकी उत्कृष्ट काव्य–प्रतिभा को प्रमुखता देता है, जिससे उनकी कविताओं में विशेषता और अद्वितीयता का अनुभव होता है।

संदर्भ –

[1] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, स्वयंवर खंड, छंद सं. 63/60
[2] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, अप्सरा खंड, छंद सं. 75
[3] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, स्वप्न खंड, छंद सं. 275
[4] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, स्वयंवर खंड, छंद सं. 37/2
[5] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, स्वयंवर खंड, छंद सं. 48/4
[6] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, विजयपाल खंड, छंद सं. 165
[7] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, स्वयंवर खंड, छंद सं. 42
[8] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, चंपावती खंड, छंद सं. 125–127
[9] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, युद्ध खंड, छंद सं. 28
[10] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, विजयपाल खंड, छंद सं. 107
[11] डॉ. नगेन्द्र – देव और उनकी कविता, पृष्ठ 190
[12] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, चंपावती खंड, छंद सं. 337/2
[13] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, स्वप्न खंड, छंद सं. 266/2

[14] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, स्वयंवर खंड, छंद सं. 40/5–8
[15] सं. डॉ. शिव प्रसाद सिंह – कवि पुहकर कृत रसरतन, स्वप्न खंड, छंद सं. 210